# International Research Journal of Management Science & Technology


**ISSN 2250 – 1959(0nline)**
**2348 – 9367 (Print)**

*An Internationally Indexed Peer Reviewed & Refereed Journal*

www.IRJMST.com
www.isarasolutions.com

Published by iSaRa Solutions

# "हिन्दी नाट्य-भाषा के विकास में मोहन राकेश का योगदान : एक आलोचनात्मक अध्ययन"

**डॉ. रंजना सिंह,**
असिस्टेंट प्रोफ़ेसर(हिंदी)
इलाहबाद डिग्री कालेज, प्रयागराज
(इलाहबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज)

**सारांश**

मोहन राकेश हिन्दी नाटक के उस युगीन परिवर्तन के अग्रदूत थे, जिन्होंने नाट्य भाषा को केवल संवाद का माध्यम न बनाकर, संवेदना, विचार और जीवन-दर्शन की सजीव अभिव्यक्ति का उपकरण बनाया। उनके नाटकों में भाषा पात्रानुकूल, परिस्थितिजन्य और भावप्रधान होती है, जो आधुनिक हिन्दी रंगमंच की आवश्यकताओं के अनुरूप एक नवीन रूप प्रस्तुत करती है। प्रस्तुत लेख में मोहन राकेश के नाटकों की भाषा के माध्यम से हिन्दी नाट्य भाषा के विकास में उनके योगदान का विश्लेषण किया गया है।

हिन्दी नाट्य साहित्य का विकास केवल विषयवस्तु या कथ्य के स्तर पर नहीं हुआ है, बल्कि भाषा की अभिव्यक्ति और संवाद की नवीन संरचना के कारण भी यह समृद्ध हुआ है। मोहन राकेश इस परिवर्तनशीलता के केंद्र में स्थित एक ऐसे नाटककार हैं जिन्होंने नाट्य भाषा को कृत्रिमता से मुक्त कर वास्तविक जीवन के बोलचाल और संवेदनाओं से जोड़ा। उनके नाटकों में प्रयुक्त संवाद आधुनिक मनुष्य की टूटन, द्वंद्व और अस्तित्वगत पीड़ा को स्वर देते हैं। यह लेख हिन्दी नाट्य भाषा के ऐतिहासिक विकास की समीक्षा करते हुए यह स्पष्ट करता है कि मोहन राकेश ने भाषा को केवल संप्रेषण का माध्यम नहीं, बल्कि चरित्र-निर्माण और भाव-अभिव्यक्ति का सशक्त उपकरण बनाया।

**भूमिका**

हिन्दी नाटक का विकास भारतीय साहित्य की दीर्घ परंपरा में अपेक्षाकृत नवीन है। आरंभिक काल में जब हिन्दी नाटक संस्कृत नाट्यशास्त्र और पाश्चात्य प्रभावों से प्रभावित था, तब संवाद और भाषा मुख्यतः औपचारिक, भावप्रधान और अलंकारिक थे। परंतु स्वतंत्रता के पश्चात् सामाजिक परिवर्तनों और मध्यवर्गीय जीवन की जटिलताओं ने हिन्दी नाटक को नया मुहावरा दिया। इस युग में मोहन राकेश का आगमन नाट्य भाषा के विकास में एक निर्णायक मोड़ सिद्ध हुआ।

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र से आरम्भ होकर जयशंकर प्रसाद, लक्ष्मीनारायण मिश्र, धर्मवीर भारती और जगदीशचन्द्र माथुर तक हिन्दी नाट्य परंपरा ने अनेक चरण तय किए। परंतु हिन्दी नाट्य भाषा को वास्तविक जीवन की सहजता, यथार्थता और आधुनिकता का जो रूप मिला, उसका श्रेय मोहन राकेश को जाता है। उनके नाटक 'आषाढ़ का एक दिन', 'लहरों के राजहंस', 'आधे-अधूरे' और 'पैर तले की ज़मीन' ने हिन्दी नाट्य-भाषा की दिशा ही नहीं, उसकी संवेदना भी बदली।

**<u>मोहन राकेश की नाट्य-भाषा का ऐतिहासिक विकास एवं विशिष्टताएँ</u>**

भारत की नाट्य परंपरा का आरंभ नाट्यशास्त्र से माना जाता है, जहाँ संवाद की संरचना भाव, रस और अभिनय के अनुरूप होती थी। मध्यकाल में भक्ति नाट्य परंपरा ने धार्मिक भावों को प्रमुखता दी। आधुनिक युग में भारतेंदु हरिश्चन्द्र और जयशंकर प्रसाद जैसे नाटककारों ने हिन्दी नाटक को साहित्यिक गरिमा प्रदान की।

भारतेंदु हरिश्चन्द्र ने नाट्य भाषा को लोकजीवन से जोड़ा, प्रसाद ने उसे काव्यात्मक गाम्भीर्य दिया और बाद के काल में मोहन राकेश ने उसमें यथार्थवादी संवाद और मनोवैज्ञानिक गहराई जोड़ी। इस विकास-यात्रा में नाट्य भाषा धीरे-धीरे औपचारिकता से वास्तविकता की ओर अग्रसर हुई।

मोहन राकेश की नाट्य भाषा उनकी रचनात्मक दृष्टि का दर्पण है। उन्होंने संवाद को पात्रों की आंतरिकता का द्योतक बनाया। उनकी भाषा में तीन स्वरूप स्पष्ट रूप से दिखाई देते हैं – कथ्य को प्रगति देने वाली भाषा, घटनाओं को सूचित करने वाली भाषा और स्वगत नाट्य भाषा। इन तीनों के माध्यम से राकेश ने भाषा को जीवन की गति और भावों की तीव्रता प्रदान की।

मोहन राकेश के नाटकों की भाषा हिन्दी नाटक की भाषा में एक नई क्रांतिकारी दिशा लेकर आई। वे नाटककार समकालीन जीवन की जटिलताओं, आत्मा के द्वन्द्व, विसंगतियों और सामाजिक परिवर्तनों को अपनी नाट्य-भाषा में सजीव रूप से प्रस्तुत करने में सफल हुए। उनकी नाट्य-भाषा सहज, सरल, स्वाभाविक होने के साथ संवादोन्मुख थी, जिसमें भाव-भंगिमा और संकेतों का सूक्ष्म प्रयोग था। इस भाषा में पारंपरिक संस्कृतनिष्ठता के साथ उर्दू-फारसी, अंग्रेज़ी मिश्रित शब्दों का उचित समावेश भी था, जो आधुनिक जीवन की विविधता और टोन को अभिव्यक्त करता था।

मोहन राकेश का सबसे बड़ा योगदान यह रहा कि उन्होंने नाट्य संवादों को सामान्य जीवन की भाषा में ढाला। ‘आधे अधूरे’, ‘लहरों के राजहंस’ और ‘आषाढ़ का एक दिन’ जैसे नाटकों में उनकी भाषा न तो काव्यात्मक है, न ही अत्यधिक बोलचाल की। वह बीच का रास्ता अपनाती है – जहाँ भाव और यथार्थ का संतुलन कायम रहता है।

उनकी भाषा में वाक्य संरचना छोटी, सटीक और भावोत्तेजक है। वे मौन को भी एक संवाद की तरह प्रयुक्त करते हैं। उनके पात्र अपनी असफलताओं, द्वंद्वों और इच्छाओं को शब्दों के साथ-

साथ मौन और विरामों के माध्यम से भी व्यक्त करते हैं। यही प्रयोगधर्मिता उनकी भाषा को जीवंत बनाती है।

"शब्दों और ध्वनियों को रंगमंच का बुनियादी तत्त्व मानने के कारण ही राकेश आजीवन नाटकीय शब्द की तलाश में लगे रहे। उनके सभी नाटक रचनाकार की शब्द संबंधी मान्यता पर खरे उतरते हैं तथा नाटकीय संभावना से युक्त शब्दों के सटीक प्रयोग का श्रेष्ठ उदाहरण प्रस्तुत करते है राकेश की रचनाओं में पहली बार भाषा नाटककार के अतिरिक्त शब्द-मोह. नाटकीय दृष्टि से निरर्थक शब्दजाल के आग्रह और आलंकारिकता के लबादे से सहसा मुक्त हई है। यद्यपि अपने पहले दो नाटकों 'आषाढ़ का एक दिन' एवं 'लहरों के राजहंस' में संस्कृतनिष्ठ साहित्यिक भाषा के प्रयोग के कारण नाट्य-समीक्षकों ने राकेश को प्रसाद की परंपरा का वाहक माना है, लेकिन कई मायनों में राकेश की नाट्यभाषा, प्रसाद की नाट्यभाषा से बुनियादी रूप से भिन्न है। प्रसाद के नाटकों में काव्यात्मकता और अलंकारप्रियता कई स्थानों पर नाट्य-भाषा को बाँधती हुई चलती है एवं रंग-सिद्धि में बाधा उत्पन करती है, वहीं राकेश की भाषा साहित्यिक होते हुए भी नाटकीय संभावना से युक्त है एवं आम बोलचाल के काफी निकट है।"[1]

'आषाढ़ का एक दिन' में भाषा संस्कृतनिष्ठ होते हुए भी काव्यात्मक और भावगंभीर है। 'आषाढ़ का एक दिन' में एक संवाद को उदाहरण के रूप में देखा जा सकता है जिसमें मल्लिका अपने भीतर के कवित्व, आत्मानुभूति, प्रेम और संवेदनशील सौन्दर्य-बोध को व्यक्त करते हुए कहती है-

"मल्लिकाः माँ, आज के वे क्षण मैं कभी नहीं भूल सकती। सौंदर्य का ऐसा साक्षात्कार मैंन कभी नहीं किया। जैसे वह सौन्दर्य अस्पृश्य होते हुए भी मांसल हो, मैं उसे छू सकती थी, देख सकती थी, पी सकती थी। तभी मुझे अनुभव हुआ कि वह क्या है जो भावना को कविता का रूप देता है ।"[2]

'लहरों के राजहंस' में भाषा अधिक सांकेतिक और प्रतीकात्मक हो जाती है, जबकि 'आधे-अधूरे' और 'पैर तले की ज़मीन' में यही भाषा बोलचाल की, तीखी और आधुनिक जीवन के तनावों से भरी दिखाई देती है। इस परिवर्तनशील भाषा ने हिन्दी नाटक को जनजीवन से जोड़ा और उसे एक नए युग की संवेदना प्रदान की। 'लहरों के राजहंस' में संवेदना, सौंदर्यबोध और दर्शन का चित्र खीचती सांकेतिक और प्रतीकात्मक भाषा शैली क उदाहरण देख जा सकता है-

"सुन्दरीः बोल नहीं! चुपचाप सुन !

कलरव धीरे-धीरे शांत पड़ जाता है।

इस स्वर की कहीं तुलना है? कह नहीं सकती क्या अधिक सुन्दर है? ओस से लदे कमलों के बीच राजहंसों के इस जोड़े किलोल या इस झुटपुटे अँधेरे में दूर से सुनाई देता इनका क्रूजन। आज

पहली बार इन्हें इस समय बोलते सूना है।(जरा हँसकर) कोई गौतम बुद्ध से कहे कि कभी कमल ताल के पास आकर इनसे वे भी निर्वाण और अमरत्व की बातें कहें।[3]

इन उदाहरणों से यह बात पूर्णतः स्पष्ट हो जाती है कि साहित्यिक होते हुए भी मोहन राकेश की भाषा नाटकीय संभावनाओं से परिपूर्ण तथा आम बोलचाल के अत्यंत निकट है। किसी विशेष कालखंड का आभास देने के लिए भाषा का संस्कृत-निष्ठ होना आवश्यक था, इसलिए उन्होंने अपने नाटकों में उसी सीमा तक काव्यात्मकता का प्रयोग किया है। उनकी भाषा में मात्र अलंकारिकता की सृष्टि के लिए कोई भी शब्द अनावश्यक रूप से प्रयुक्त नहीं हुआ है। मोहन राकेश के प्रारंभिक नाटकों की भाषा की इस विशेषता को रेखांकित करते हुए गिरीश रस्तोगी ने लिखा है कि–

"राकेश ने साहित्यिक भाषा को नाटक के अनुरूप ढाल लिया है, उसे रंगमंच की भाषा के निकट ला दिया है। उनके दोनों नाटकों की भाषा केवल इस मायने में साहित्यिक है कि वह संस्कृत-निष्ठ हिन्दी है, केवल उतनी ही जितनी कि एक काल विशेष को पृष्ठभूमि में रखने के कारण अपेक्षित यथार्थ-भ्रम की सृष्टि के लिए आवश्यक है।"[4]

'आधे अधूरे' में मोहन राकेश ने पारिवारिक और सामाजिक संबंधों की विडम्बनाओं को भाषा के माध्यम से अत्यंत तीव्र रूप में व्यक्त किया है। संवादों में आने वाले टूटे वाक्य, अधूरे उत्तर, और प्रश्नवाचक संरचनाएँ आधुनिक मनुष्य की असंतुष्टि का प्रतीक बन जाती हैं।

'आधे अधूरे' की भाषा और उसके संवादों की आलोचको ने मुक्त कंठ से प्रशंसा की है। डाक्टर गिरीश रस्तोगी ने 'मोहन राकेश और उनके नाटक' में उनके नाट्य भाषा की विशेषता बताते हुए लिखा है- "साहित्यिक होते हुए भी गहरी नाट्यानुभूति से जन्मी भाषा 'आषाढ़ का एक दिन' और 'लहरों के राजहंस', जीवंत बोलचाल की भाषा 'आधे अधूरे' और बेतरतीब, बेतुकी, टूटी-फूटी भाषा कुछ एब्सर्ड नाटकों का आभास देती हुई(बीज नाटक) ।" (पृष्ठ 152)

'आधे अधूरे' में संवादों की भाषा आधुनिक शहरी जीवन की विसंगतियों का प्रतीक है; यहाँ मौन, विराम और विडम्बनात्मक वाक्य विन्यास स्वयं एक अर्थगत संरचना का रूप ग्रहण करते हैं।

दरअसल, किसी लेखक की भाषा की पहचान उसके संवादों से होती है। संवादों में प्रयुक्त अर्थच्छवियाँ उसकी भाषा को विशिष्ट और प्रभावशाली बनाती हैं। 'आधे-अधूरे' में सामान्य से सामान्य शब्दों के भीतर भी जो गूढ़ अर्थ और संवेदनाएँ छिपी हैं, वे अद्वितीय हैं। उदाहरण के लिए, 'खड़ा होना' जैसी साधारण क्रिया जब संवादों में आती है, तो वह केवल क्रिया न रहकर चरित्र की मानसिक स्थिति, असंतोष और विद्रोह का प्रतीक बन जाती है। इस प्रकार मोहन राकेश ने शब्दों और वाक्यों के माध्यम से संवादों को गहरी अर्थवत्ता प्रदान की है। उदाहरण के रूप में 'आधे अधूरे' के एक संवाद प्रसंग को देखा जा सकता है-

"पुरुष एक : (गुस्से से उठता) तुम तो ऐसी बात करती हो जैसे.....

स्त्री : खड़े क्यों हो गए ?

पुरुष एक : क्यों, मैं खड़ा नहीं हो सकता ?

स्त्री : (हल्का वक्फा लेकर तिरस्कार पूर्ण स्वर में) हो तो सकते हो, पर घर के अन्दर ही।..........” [5]

इसी प्रकार स्त्री-पुरुष के बीच एक और संवाद को देखा जा सकता है जो स्त्री चरित्र को रेखांकित करता दिखाई देता है--

“स्त्री :........अभी कोई आने वाला है बाहर से और.....

बड़ी लड़की : कौन आने वाला है ?

पुरुष एक : सिधानिया। इसका बास ! वह 'नया' आना शुरू हुआ है।

पुरुष एक : तो लोगों को पता है, वह आता है यहाँ ?

स्त्री : क्यों, बुरी बात है ?

पुरुष एक : मैंने कहा बुरी बात है ? मैं तो बल्कि कहता हूँ अच्छी बात है।

स्त्री : तुम जो कहते हो उसका मतलब समझ में आता है मेरी।

पुरुष एक : तो अच्छा यही है कि मैं चुप रहा करूं......

स्त्री: तुम चुप रहते हो !”[6]

शिप्रा का असंतोष, अशोक की व्यग्रता, और सावित्री का आत्मद्‌वंद्‌व – सब भाषा की द्‌विअर्थी संरचनाओं से उजागर होते हैं। राकेश की भाषा यहाँ केवल कथ्य नहीं बनाती, बल्कि पात्रों के मानसिक और सामाजिक स्तर की रेखाएँ भी खींचती है।

मोहन राकेश ने नाट्य भाषा को संवाद की सीमाओं से मुक्त कर जीवन की भाषा में रूपांतरित किया। उनकी भाषा में कथ्य की गूंज, भावों की लय और विचार की गहराई एक साथ उपस्थित रहती है। उन्होंने मंच पर शब्द और क्रिया के बीच संतुलन बनाते हुए नाट्य भाषा को ध्वनि, संकेत और भंगिमा से समृद्‌ध किया। ‘छतरियां’ जैसे बीज नाटकों में उन्होंने शब्दों की न्यूनता और ध्वनियों की प्रभावशीलता से नाटकीय वातावरण रचा, जो हिन्दी रंगमंच के लिए एक अभिनव प्रयोग था।

राकेश की भाषा पात्रों के सामाजिक परिवेश, मनोविज्ञान और भाव-संवेदना के अनुकूल है। उनके शब्द चयन में सटीकता और ध्वन्यात्मक प्रभाव स्पष्ट झलकता है। उन्होंने संस्कृतनिष्ठ, उर्दू-फ़ारसी और अंग्रेज़ी मिश्रित हिन्दी का प्रयोग प्रसंगानुसार किया, जिससे उनकी भाषा आधुनिक जीवन की जटिलता को अभिव्यक्त कर सकी।

राकेश की भाषा में नाटक के कथ्य को प्रगति देने वाली संवाद-शैली, घटनाओं की सूचना देने वाली भाषा और पात्रों के अंतर्निहित मनोभाव व्यक्त करने वाली स्वगत भाषा के तीन स्वरूप मिलते

हैं। उनकी भाषा की लयात्मकता, सांकेतिकता और दार्शनिकता ने हिन्दी नाट्य-भाषा को एक सांस्कृतिक और कलात्मक ऊंचाई दी, जिसने नयी पीढ़ी के नाटककारों को भी प्रेरित किया।

इसके अतिरिक्त, उन्होंने नाटकों में शब्दों की जगह ध्वनि, गति और भावभंगिमा के प्रयोग से भी रंगमंचीय प्रभाव बढ़ाया, जिससे शब्दों के अन्दर अप्रकट भाव-भंगिमा और अर्थ उद्घाटित हुए। इस प्रयोग ने हिन्दी नाट्य-भाषा को परंपरागत सीमाओं से मुक्त कर नयी भाषा की तलाश को बल दिया।

इस प्रकार, मोहन राकेश ने हिन्दी नाट्य-साहित्य में नाट्य-भाषा को रूपांतरित कर, उसे अधिक संवादात्मक, भावनात्मक, और यथार्थपरक बनाने में अभूतपूर्व योगदान दिया, जो हिन्दी रंगमंच की भाषा को एक नए युग में ले गया। उनका यह भाषाई योगदान हिन्दी नाटककारों और रंगकर्मियों के लिए स्थायी मार्गदर्शक है।

मोहन राकेश के नाटकों की भाषा निरंतर विकसित होती रही। 'आषाढ़ का एक दिन' की काव्यात्मक भाषा से लेकर 'आधे-अधूरे' की यथार्थवादी भाषा तक उनकी नाट्य-भाषा ने आधुनिक समाज की बदलती संवेदनाओं और संघर्षों का प्रतिबिम्ब प्रस्तुत किया। उनकी भाषा में जीवन की विडम्बना, मूल्य-संकट और अस्तित्वगत द्वंद्व के स्वर गूंजते हैं। इस प्रकार राकेश ने हिन्दी नाट्य भाषा को केवल माध्यम नहीं, बल्कि एक सजीव पात्र के रूप में प्रतिष्ठित किया।

**निष्कर्ष-**

मोहन राकेश ने हिन्दी नाट्य साहित्य में भाषा को नया आयाम प्रदान किया। उन्होंने संवादों के माध्यम से पात्रों के भीतर चल रहे द्वंद्व को व्यक्त कर हिन्दी रंगमंच को आधुनिक चेतना दी। उनकी भाषा का विकास हिन्दी नाटक की भाषा के विकास का ही प्रतीक है। 'आधे-अधूरे' जैसी कृतियों ने नाट्य भाषा को जीने की भाषा बना दिया। निश्चित ही, यदि राकेश दीर्घायु होते तो हिन्दी नाट्य भाषा का क्षितिज और भी विस्तृत होता। उनका योगदान हिन्दी नाट्य परंपरा में एक मील का पत्थर है।

मोहन राकेश ने हिन्दी नाटक की भाषा को केवल संवादात्मक न रखकर उसे एक भावनात्मक और बौद्धिक संरचना का रूप दिया। उन्होंने यह सिद्ध किया कि भाषा केवल पात्रों के मुख से बोले गए शब्द नहीं, बल्कि उनके मनोभावों की अभिव्यक्ति का माध्यम भी है। उनकी रचनाओं ने नाट्य भाषा को आधुनिक संवेदना, सामाजिक यथार्थ और अंतर्द्वंद्व की भाषा बना दिया। आज हिन्दी नाटक में जो यथार्थवादी प्रवृत्ति दिखाई देती है, उसकी जड़ें राकेश के प्रयोगों में स्पष्ट रूप से मिलती हैं।

सन्दर्भ सूची-

1. प्रयागपथ, जुलाई 2025, मोहन राकेश के नाटकों की रंगदृष्टि :आभा गुप्ता ठाकुर, पृष्ठ 174

2. मोहन राकेश, 'आषाढ़ का एक दिन', राजपाल एण्ड संस, दिल्ली, 1958, पृष्ठ 8

3. मोहन राकेश, 'लहरों के राजहंस', राजपाल एण्ड संस, दिल्ली, पृष्ठ 38

4. गिरीश रस्तोगी, आधुनिक हिंदी नाटक और रंगमंच (राकेश और उनके नाटक), पृष्ठ 146

5. मोहन राकेश , 'आधे अधूरे', राधाशरण प्रकाशन, दिल्ली 1974, पृष्ठ 18

6. मोहन राकेश , 'आधे अधूरे', राधाशरण प्रकाशन, दिल्ली 1974, पृष्ठ 33

7. मोहन राकेश, 'पैर तले की ज़मीन',

8. डॉ. नेमिचंद्र जैन,(संपा.), मोहन राकेश संपूर्ण नाटक, दिल्ली, 1993

9. मोहन राकेश, 'परिवेश' तथा अन्य एकांकियाँ तथा बीज नाटक

# ISARA INSTITUTE OF MANAGEMENT & PROFESSIONAL STUDIES

RESEARCH GATEWAY

AROGYAM ONLINE

# PARIVARTAN PSYCHOLOGY CENTER

भारतीय भाषा, शिक्षा, साहित्य एवं शोध
ISSN 2321 – 9726
WWW.BHARTIYASHODH.COM

INTERNATIONAL RESEARCH JOURNAL OF
MANAGEMENT SCIENCE & TECHNOLOGY
ISSN – 2250 – 1959 (0) 2348 – 9367 (P)
WWW.IRJMST.COM

INTERNATIONAL RESEARCH JOURNAL OF
COMMERCE, ARTS AND SCIENCE
ISSN 2319 – 9202
WWW.CASIRJ.COM

INTERNATIONAL RESEARCH JOURNAL OF
MANAGEMENT SOCIOLOGY & HUMANITIES
ISSN 2277 – 9809 (0) 2348 - 9359 (P)
WWW.IRJMSH.COM

INTERNATIONAL RESEARCH JOURNAL OF SCIENCE
ENGINEERING AND TECHNOLOGY
ISSN 2454-3195 (online)

WWW.RJSET.COM

INTEGRATED RESEARCH JOURNAL OF
MANAGEMENT, SCIENCE AND INNOVATION
ISSN 2582-5445

WWW.IRJMSI.COM

JOURNAL OF LEGAL STUDIES,POLITICS
AND ECONOMICS RESEARCH

WWW.JLPER.COM